प्यारी वाणी फटकारी, दाया रोंद रोंद मारी,
दारी सभ्यता बिसारी, सींग सत्य को दिखाते हैं ॥
मूढ़-मण्डली में ऊले, स्वामी शंकर को भूले,
फिरें संजन से फूले, नाश को न देख पाते हैं ।
ऊँची जाति को लजाते, नीच ता की मार खाते,
पूरे पात की कहाते, जाली-जीवन बिताते हैं ॥१॥

हठीला हेकड़ ५५

[दोहा]

कर्म सुधारेगा नहीं, कुटिल कुकर्मारूढ़ ।
कोरा हठ-वादी बना, मन्द-मनोमुख-मूढ़ ॥१॥

हठ से बिगाड़ ५६

(गीत)

जिस का हठ से हुआ बिगाड़,
उस को कौन सुधार सकेगा ॥टेक॥
हठ को तजे न हठ का दास, फटके न्याय न पशु के पास,
सब का करे सदा उपहास, ऐंठू अड़ न बिसार सकेगा ।
जि० ह० हु० बि० उ० कौ० सु० सकेगा ॥
बञ्चक चतुरों से बद होड़, अटके टांग अकड़ की तोड़,
उजबक बात कहे बेजोड़, हेकड़ नेक न हार सकेगा ॥
जि० ह० हु० बि० उ० कौ० सु० सकेगा ॥
मन का मित्र प्रमाद-प्रचण्ड, तन का पोषक प्रिय-पाखण्ड,
धन से उपजा घोर-घमण्ड, दुर्मत क्यों न प्रचार सकेगा ।
जि० ह० हु० बि० उ० कौ० सु० सकेगा ॥

अपनी जड़ता को जड़ जार, समझे प्रतिभा का अवतार,
शठ के सिर से भ्रम का भार, शंकर भी न उतार सकेगा ॥
जि० ह० हु० बि० उ० कौ० सु० सकेगा ॥१॥

मिथ्या से हानि ५७

(दोहा)

मिथ्या से मिलता नहीं, वैदिक-मत का मर्म ।
पूरा शत्रु असत्य का, सत्य-सनातन-धर्म ॥ १ ॥

हेत्वाभास का उपहास ५८

(गीत)

साधन धर्म कारे,
कर्माभास न होसकता है ॥ टेक ॥
पैर पसार प्रसुप्तों के से, कपटी सो सकता है ।
निद्रा हीन बोध विषयोंका, कभी न खो सकता है ॥
सा० ध० क० न हो सकता है ॥
पढ़ पढ़ बोझा सद्ग्रन्थों का, पढुआ ढो सकता है ।
बिन विज्ञान पराविद्या का, बीज न बो सकता है ॥
सा० ध० क० न हो सकता है ॥
भक्त कहाने को ठाकुर का, ठग भी रो सकता है ।
क्या ? शंकर के प्रेमामृत में, चञ्चु भिगो सकता है ॥
सा० ध० क० न हो सकता है ॥१॥

ढोंग और हरभोंग ५९

(दोहा)

लूट रहा संसार को, रच रच कोरे ढोंग ।
क्या ? न बिसारेगा कभी, तू अपने हरभोंग ॥ १ ॥

बनावट से बचो ६०

(षट्पदी-छन्द)

ढोंग बनावट से न, किसी का काम चलेगा।
कृत्रिम-नीरस-वृक्ष, न कोई फूल फलेगा ॥
बना न वाहन-राज, कभी लकड़ी का हाथी।
सार विहीन असत्य, सत्य का सुना न साथी ॥
कुछ मिथ्या से होता नहीं, आंख उघार निहार लो।
सुख चाहो तो सद्भाव से, शंकर को उर धार लो ॥१॥

भोंदू भगत ६१

(दोहा)

औरों को ठगता रहा, बैठा अब अनुपाय।
माला सटकाता फिरे, भोंदू भगत कहाय ॥१॥

बुढ़ापे की भगतई ६२

(दादरा)

ठग बन गया,
ठग बन गया, भगत बुढ़ापे में ॥ टेक ॥
छोड़ा डकैतों की फेंटी में जाना, झांके न वीरों के टापे में।
ठ० ब० ठ० ब० भ० बुढ़ापे में ॥
बैठा ठिकाने पै देवों को पूजे, पूंजी लगादी पुजापे में ॥
ठ० ब० ठ० ब० भ० बुढ़ापे में ॥
बीती जवानी की मैली पिछौरी, धोने को आया है आपे में।
ठ० ब० ठ० ब० भ० बुढ़ापे में ॥
खोजायगा शंकरादर्श तेरा, जोपै छपेगा न छापे में ॥
ठ० ब० ठ० ब० भ० बुढ़ापे में ॥ १ ॥

संशयात्मा विनश्यति ६३

[दोहा]

कोरे तर्क वितर्क में, उलझें बाद विवाद ।
अस्थिर जी पाता नहीं, शंकर सत्य-प्रसाद ॥ १ ॥

संशयसंपन्न ६४

[मालती-सवैया]

तीन अनादि, अनन्त मिला कर ऋग्यजु साम अथर्व वखाने ।
नित्य-स्वभाव रचे सब को करतार निरीश्वर-वाद न माने ॥
शंकर का मत ब्रह्म बना जगदद्भुत को भ्रम का फल जाने ।
सत्य-कथा समझें किस की अगुआ अपनी अपनी तक ताने ॥१॥

तार्किक का परोक्ष-पञ्चक ६५

(दोहा)

है कब से, संसार का, कब तक होगा नाश ।
क्या देगा इस प्रश्न का, उत्तर युक्ति-प्रकाश ॥ १ ॥
जन्म लिया, जीता रहा, जोड़ शुभा शुभ कर्म ।
छोड़ गया जो देह को, उस का मिला न मर्म ॥ २ ॥
कौन बिराजे स्वर्ग में, नरक निबासी कौन ।
मुक्त-जीव पाया किसे, सब का उत्तर मौन ॥ ३ ॥
तर्क-प्रमाणों से परे, पितरों का पर लोक ।
सुनते हैं, देखा नहीं, मान लिया रुचि रोक ॥ ४ ॥
लोगों पै खुलते नहीं, जिन विषयों के भेद ।
साधें शब्द-प्रमाण से, उन को, उन के वेद ॥ ५ ॥

दंभ-दशक ६६

(दोहा)

जिन में देखोगे नहीं, पौरुष, धर्म, विवेक।
ठगते हैं वे देश को, रच पाखण्ड अनेक ॥ १ ॥

विश्व-नाथ, माता, पिता, सद्गुरु, साधु-समाज।
पांचो से पहले पुजें, मूढ़-मनोमुख-राज ॥ २ ॥

घेर रहे संसार को, पोच प्रपञ्च पसार।
दम्भासुर के सूरमा, बिचरें लण्ठ, लबार ॥ ३ ॥

छुआ छूत छोंकें छटे, छलिया गाल बजाय।
चाल न चूकें ढोंग की, नीच-निरंकुश हाय ॥ ४ ॥

कल्पित-ग्रन्थों को कहैं, सत्य-सनातन-वेद।
अन्ध-जालिया जाति में, भरते हैं मत-भेद ॥ ५ ॥

मान सच्चिदानन्द के, दूत, पूत, अवतार।
भूले महिमा ब्रह्म की, अबुध, अविद्याधार ॥ ६ ॥

पोच पुजारी पेट के, पुण्य कलुष को मान।
देते हैं करतार को, पशुओं के बलि दान ॥ ७ ॥

दाता को परलोक में, मिलते हैं सुख-भोग।
ऐसे बचनों से बने, दान-वीर लघु लोग ॥ ८ ॥

फैल रहे संसार में, जटिल-मतों के जाल।
अज्ञानी उलझे पड़े, अटका वन्ध-विशाल ॥ ६ ॥

धोखा है, भ्रम-जाल है, कोरा कपट-प्रयोग।
बचते हैं पाखण्ड से, साधु-सरल-उद्योग ॥ १० ॥

अड़ीले उपदेशक ६७

(दोहा)

बांके बकवादी बृथा, करते हैं बकवाद ।
हाय ! सुधरेगा किसे, इनका केहरि-नाद ॥ १ ॥

मतवादी वक्ता ६८

(गीत)

बैर बिरोध बढ़ाने वाले,
बांके बकवादी बकते हैं ॥ टेक ॥
चारों ओर दहाड़ रहे हैं, पेट प्रेम का फाड़ रहे हैं,
थोथी बातें कहते कहते, बक्कू नेक नहीं थकते हैं
बै० वि० ब० वा० बां० ब० बकते हैं ॥
गर्व-गपोड़े सिखलाते हैं, दर्प दम्भ का दिखलाते हैं,
कपटी पोल खोल औरोंकी, अपने पापों को ढकते हैं ।
बै० वि० ब० वा० बा० ब बकते हैं ॥
मूढ़-मंत्र देते फिरते हैं, धन्यवाद लेते फिरते हैं,
छी छी? छाक दरिद्र देशकी, छैला छीन छीन छकते हैं ।
बै० वि० ब० वा० बां० ब० बकते हैं ॥
धींग--धसोड़ी हांक रहे हैं, धूलि धर्म की फांक रहे हैं,
शंकर काम सूझतों के से, ये अन्धे क्या कर सकते हैं ।
बै० वि० ब० वा० बां० ब० बकते हैं ॥ १ ॥

प्रमादी-पामर ६९

(दोहा)

बैठे सभ्य-समाज में, सुन डाले उपदेश ।
जड़ ज्योंके त्योंही रहे, सुधरे कर्म न लेश ॥ १ ॥

धर्म-शत्रु ७०

(गीत)

जड़ ज्यों के त्यों मति मन्द हैं,
उपदेश घने सुन डाले ॥ टेक ॥
आप न छोड़ें पाप प्रमादी, औरों को बरजें बकवादी,
रसना बनी धर्म की दादी, कटुमुख मूसलचन्द हैं,
शुभ कर्म कुचलने वाले ।
उपदेश घने सुन डाले ॥
सरल-सभ्यता से रीते हैं, भोग भ्रष्ट जीवन जीते हैं,
आमिष खाय, सुरा पीते हैं, कपट--कञ्ज--मकरन्द हैं,
रसिया-मिलिन्द मन काले ।
उपदेश घने सुन डाले ॥
गीत समुन्नति के गाते हैं, पास न उद्यम के जाते हैं,
ठग ठग भोलों को खाते हैं, नटखट अति स्वच्छन्द हैं,
निरखे अलमस्त निराले ।
उपदेश घने सुन डाले ॥
प्रेम कथा कहते रोते हैं, बीज बैर-विष के बोते हैं,
दुर्लभ काल वृथा खोते हैं, बिषधर हैं कब कन्द हैं,
शंकर परखे, परखा ले ।
उपदेश घने सुन डाले ॥ १ ॥

पुरुषाकार-पशु ७१

(दोहा)

समझा दारा, द्रव्य को, अबुध जीवनाधार ।
अन्ध किया अन्धेर ने, पामर-पुरुषाकार ॥ १ ॥

प्रचण्ड-प्रमादी ७२

(त्रिविरामात्मक-राजगीत)

बीते अनेक, वर्ष वृथा, आयु खो रहा।
सूझे तुझे न, ईश अरे, अन्ध हो रहा॥
कामादिशत्रु, घेर रहे, नाचता फिरे।
मारे न इन्हें, मार सहे, भीरु रो रहा॥
पाला अधर्म, धर्म कभी, धारता नहीं।
जागे कुकर्म, बोल! कहां, सत्य सो रहा॥
सीधा सुपन्थ, भूल गया, भेड़—चालिया।
लादे बटोर, पाप घने, भार ढो रहा॥
विद्या-बिलास, मान रहा, छद्म-वाद को।
आनन्द-कथा, व्याधिनदी, में डुबो रहा॥
माने न व्यास, कोन गिने, शंकरादि को।
कोरा लबार, लखठ बड़ों, को बिगो रहा॥ १॥

मदोन्मत्त ७३

(दोहा)

भूला तू भगवान को, रे! मद मत्त अजान।
पोच प्रतिष्ठा का वृथा, करता है अभिमान॥ १॥

अर्थाभिमानी ७४

(गीत)

तेरे अस्थिर हैं सब ठाठ,
बाबा क्यों घमण्ड करता है॥ टेक॥

भिक्षुक और मेदिनी नाथ, भव तज भागे रीते हाथ,
क्या कुछ गया किसी के साथ, तोभी तू न ध्यान धरता है।
ते० अ० स० बा० घ० करता है॥

उतरी लड़काई की भङ्ग, तड़का तरुणाई का तङ्ग,
जमने लगा जरा का रङ्ग, भूला नेक नहीं डरता है।
ते० अ० स० बा० घ० करता है॥

होगा मरण-काल का योग, तुझ से छूटेंगे सुख-भोग,
आकर पूछेंगे पुर-लोग, क्यों रे अभिमानी मरता है।
ते० अ० स० बा० घ० करता है॥

प्यारे चेत प्रमाद बिसार, करले औरों का उपकार,
शंकर-स्वामी को उर धार, यों सद्भक्त जीव तरता है॥
ते० अ० स० बा० घ० करता है॥१॥

बुढ़ापे की तृष्णा ७५

[दोहा]

पाय बुढ़ापा देह के, हालगये सब जोड़।
तृष्णा तरुणी को अरे, छलिया अबतो छोड़॥१॥

बुढ़ापे का पछतावा ७६

(गीत)

रस चाट चुका लघु जीवन का,
पर लालच हा! न मिटा मन का॥ टेक॥
गत शैशव उद्धत ऊल गया, उमगा नव यौवन फूल गया,
उपजाय जरा तन झूल गया, अटका लटका+सटका धन का।
र० चा० चु० ल० जी० प० ला० हा० मि० मन का॥

(+सटका धन = लाठी के सहारे डगमगा कर चलना

कुल में सविलास बिहार किये, अनुकूल घने परिवार किये,
विधि के विपरीत विचार किये, धर ध्यान बधू, बसुधा, धन का ।
र० जा० चु० ल० जी० प० ला० हा० मि० मन का ॥
पिछले अपराध पछाड़ रहे, अब के अघ दोष दहाड़ रहे,
उर दुःख अनागत फाड़ रहे, भवका भय शोक-हुताशन का ।
र० चा० चु० ल० जी० प० ला० हा० मि० मन का ॥
रच ढोंग प्रपञ्च-पसार चुका, सब ठौर फिराक़ख़मार चुका,
शठ शंकर साहस हार चुका, अब तो रट नाम निरंजन का ॥
र० चा० चु ल० जी० प० ला० हा० मि० मन का ॥ १ ॥

अशुभोन्नति ७७

(दोहा)

उपजावे जो जाति में, बैर विरोध घमण्ड ।
ऐसी उन्नति से उठें, ऊत असुर उद्दण्ड ॥ १ ॥

निषिद्धोन्नति ७८

(गीत)

रहोरे साधो,
उस उन्नति से दूर ॥ टेक ॥
जिस के साथी लघु छाया के, उपजे ताड़ खजूर ।
फल खोआ ऊँचे चढ़ते हैं, गिरें तो चकनाचूर ॥
रहोरे साधो, उस उन्नति से दूर ॥
जिस से मान बढ़े मूढ़ों का, पण्डित बने मजूर ।
आदर पावे बास बसा की, ठोकर खाय कपूर ॥
रहोरे साधो, उस उन्नति से दूर ॥

जिस के द्वारा उच्च कहाये, कुपथ, कुचाली, क्रूर।
मुक्ता बने न्याय—सागर के, हठ-सर के शालूर ॥
रहोरे साधो, उस उन्नति से दूर ॥
जिस के ऊँट नीचता लादें, यश चाहें भर पूर।
हा ? शंकर पापी बन बैठे, पुण्य—समर के शूर ॥
रहो रे साधो, उस उन्नति से दूर ॥ १ ॥

नामी कर्मवीर ७९

(दोहा)

जो बड़भागी साहसी, करते हैं शुभ काम।
रहते हैं संसार में, जीवित उन के नाम ॥ १ ॥

धर्मधुरन्धर ८०

(गीत)

ध्रुवता धार धर्म के काम,
धोरी-धीर—वीर करते हैं ॥ टेक ॥
करते उत्तम कर्मारम्भ, सुकृती गाड़ें सुकृत—स्तम्भ,
नामी निरभिमान निर्दम्भ, दुष्टों से न कभी डरते हैं।
ध्रु० धा० ध० धो० धी० करते हैं ॥
सत्वर अनुत्साह के झाड़, उर आलस्यासुर का फाड़,
कतरें कठिनाई की आड़, संकट औरों के हरते हैं ॥
ध्रु० धा० ध० धो० धी० करते हैं ॥
प्यारे पौरुष प्रेम पसार, विचरें विद्या-बल विस्तार,
बाँटें निज-कृत आविष्कार, उद्यम देशों में भरते हैं।
ध्रु० धा० ध० धो० धी० करते हैं ॥

प्रेमी पूरा सुयश कमाय, ब्रह्मानन्द महा फल पाय,
शंकर-स्वामी के गुण गाय, ज्ञानी शोक-सिन्धु तरते हैं ॥
भ्रु० धा० ध० धो० धी० करते हैं ॥ १ ॥

उत्तेजन ८१

(दोहा)

शंकर के प्यारे बनो, बैर बिरोध बिसार।
वैदिक वीरो जातिका, करदो सर्व-सुधार ॥ १ ॥

वैदिक वीरो उठो ८२

(गीत)

वैदिक बीरो सुभट कहाय,
उलटी मत को मार भगा दो ॥ टेक ॥

गरजो ब्रह्म चर्य–बल धार, बाँधो परहित के हथियार,
अपना प्रेम–प्रताप पसार, दुर्गुण-गढ़ में आग लगादो।
वै० वी० सु० उ० म० मा० भगादो ॥

भ्रम का नाश करो भरपूर, छल का करदो चकनाचूर,
पटको घटिया-पन को दूर, बढ़िया कुल की ज्योति जगादो।
वै० वी० सु० उ० म० भा० भगा दो ॥

अनुचित विषयों को संहार, फिर आलस्य असुर को मार,
करलो उद्यम पै अधिकार, उन्नति ठगियों को न ठगादो।
वै० वी० सु० उ० म० मा० भगादो ॥

विचरो बैर बिरोध बिहाय, मानव-मण्डल को अपनाय,
सब से बिरद-बड़ाई पाय, जग में शंकर के गुण गादो ॥
वै० वी० सु० उ० म० मा० भगादो ॥१॥

अब क्या होगा ८३

(दोहा)

भूला भोग-बिलास में, अब लों रहा अचेत ।
फल की आशा छोड़ दे, उजड़ा जीवन खेत ॥१॥

बस बीत चुके ८४

(गीत)

चलोगे बाबा,
अब क्या प्रभु की ओर ॥टेक॥

खेल पसारे बालक पन में, उकसे रहे किशोर ।
आगे चल कर चन्द्र-मुखी के, चाहक बने चकोर ॥
चलोगे बाबा, अब क्या प्रभु की ओर ॥

पकड़े प्राण प्रिया-बनिता ने, बतलाये चित-चोर ।
मारे कन्दुक-मदन-दर्प के, गोल-उरोज-कठोर ॥
चलोगे बाबा, अब क्या प्रभु की ओर ॥

दुहिता, पुत्र घने उपजाये, भोग बटोर बटोर ।
अगुआ बने बढ़े कुनबा के, पकड़ा पिछला छोर ॥
चलोगे बाबा, अब क्या प्रभु की ओर ॥

पटके गाल अङ्ग सब झूले, अटके संकट-घोर ।
शंकर जीत जरा ने जकड़े, उतरी मद की खोर ॥
चलोगे बाबा, अब क्या प्रभु की ओर ॥१॥

वृद्धावस्था ८५

(दोहा)

हा ? तारुण्य-तड़ाग के, सूख गये रस-रङ्ग ।
बुढ़िया तो भी पैंठ के, सुनती फिरे प्रसङ्ग ॥ १ ॥

बिगतयौवना ८६

(गीत)

बीता यौवन तेरा,
(री) बुढ़िया बीता यौवन तेरा ॥टेक॥

धोरा रङ्ग जमाय जरा ने, कृष्ण कचों पर फेरा।
झाड़े दांत, गाल पटकाये, कर डाला मुख झेरा॥
(री) बुढ़िया बीता यौवन तेरा॥

आंखों में टेढ़ी चितवन का, बीर ? न रहा बसेरा।
फीका आनन-मण्डल मानो, विधु बदली ने घेरा॥
(री) बुढ़िया बीता यौवन तेरा॥

*झोंझ बया के से कुच झूले, फाड़+मदन का डेरा।
अब तो पास न झांके कोई, रसिया रस का चेरा॥
(री) बुढ़िया बीता यौवन तेरा॥

चेत बुढ़ापे को मत खोवे, करले काम सबेरा।
अपनाले शंकर स्वामी को, मंत्र समझले मेरा॥
(री) बुढ़िया बीता यौवन तेरा॥१॥

मृत्युकी मार ८७

(दोहा)

मरते जाते हैं घने, मानव जीवन भोग।
तरजाते हैं मृत्यु को, शंकर बिरले लोग॥१॥

महापुरुष मृत्यु को तरजाते हैं ८८

[सगणात्मक-सवैया]

तन त्याग प्रयाण किये सब ने, न टिके गति-शील गृही, न धनी।
धर मृत्यु-महासुर ने पट के, कुचले कुल रंक बचे न धनी॥

(*झोंझ = घोंसला) (×मदन का डेरा = कञ्चुकी)

भव-सागर को न तरे जड़ वे, जिन की करनी बिगड़ी, न बनी ।
बिन भेद मिले प्रभु-शंकर से, प्रतिभा बिरले बुध पाय घनी ॥१॥

अन्तिम काल ८९

(दोहा)

जीवन पूरा होलिया, अटका अन्तिम काल ।
पकड़ी चोटी मृत्यु ने, अब न बचोगे लाल ॥१॥

जीवनान्त ९०

(गीत)

बारी अब अन्त, काल की आई ॥टेक॥
भोग-बिलास भरे विषयों की, करता रहा कमाई ।
आज साज सब देने पर भी, टिकता नहीं घड़ी भर भाई ॥
बारी अब अन्त, काल की आई ॥
व्याकुल बनिता ने अंसुओं की, आकर धार बहाई ।
पास खड़ा परिवार पुकारे, रोक न सकी सनेह-सगाई ॥
बारी अब अन्त, काल की आई ॥
लगे न औषधि कविराजों ने, मारक-व्याधि बताई ।
नेक न चेत रहा चेतन को, बिछुड़ी गैल गमन की पाई ॥
बारी अब अन्त, काल की आई ॥
प्राण पखेरू तन-पंजर से, भागा कुछ न बसाई ।
काल पाय हम सब की होगी, हा! शंकर इस भांति बिदाई ॥
बारी अब अन्त, काल की आई ॥१॥

भाव निरूपण ९१

(दोहा)

ज्ञान, क्रिया धारे नहीं, चेतन, जड़ का योग ।
ऐसे दैहिक दृश्य को, मृतक मानते लोग ॥ १ ॥

मृतक शरीर ६२

(गीत)

घर में रहा न रहने वाला ॥ टेक ॥

खोल गया सब द्वार किसी में लगा न फांटक ताला ।
आय निशङ्क अदृष्ट वली ने घेर घसीट निकाला ॥
घर में रहा न रहने वाला ॥
जाने किस पुर की बाखर में, अबकी वार बिठाला ।
हा? मासादिक परिवर्तन का, अटका कष्ट कसाला ॥
घर में रहा न रहने वाला ॥
ढंग विगाड़ दिया मन्दिर का, अङ्ग भङ्ग कर डाला ।
श्रीहत हुआ अमङ्गल छाया, कहीं न ओज उजाला ॥
घर में रहा न रहने वाला ॥
शंकर ऐसे पर-बन्धन से, पड़े न पल को पाला ।
आग लगे इस बन्दी-गृह में, मिले महा-सुख-शाला ॥
घर में रहा न रहने वाला ॥ १ ॥

रूप गर्विता ६३

(सोरठा)

हाय ? अचानक आज, रूप गर्विता मर गई ।
छोड़ गया रसराज, घर को सूना कर गई ॥ १ ॥

सौन्दर्य की दुर्दशा ६४

(गीत)

नवेली अलबेली उठ बोल ? ॥ टेक ॥

बेणी-नागिन बिकल पड़ी है, शिथिल माँग-मुख खोल ।
खंजरीट, मृग खोल रहे हैं, नयन-सुयश की पोल ॥
नबेली अलबेली उठ बोल ? ॥
लाल-अधर-बिम्बा-फल सूखे, पड़ गये पीत कपोल ।
दशन-मोतियों की लड़ियों का, अब न रहा कुछ मोल ॥
नबेली अलबेली उठ बोल ? ॥
कंबु-कण्ठ-कल-कण्ठ न कूके, दबकी दमक-अतोल ।
गड़ें न रसियों की छतियों में, कठिन पयोधर गोल ॥
नबेली अलबेली उठ बोल ? ॥
परखी सब कोमल-अङ्गों में, अकड़ टटोल टटोल ।
हा ? शंकर क्या अब न बजेगा, मदन-विजय का ढोल ॥
नबेली अलबेली उठ बोल ? ॥ १ ॥

अनुभूत--भावना ९५

(दोहा)

देखी खर की दुर्दशा, उपजा उत्तम-ज्ञान ।
शंकर ने देहादि का, दूर किया अभिमान ॥ १ ॥

गर्दभ-दुर्दृश्य ९६

(गीत)

घूरे पर घबराय रहा है,
देखो रे इस व्याकुल खर को ॥ टेक ॥
और घने रासभ चरते थे, धंगने धार पेट भरते थें,
छोड़ इसे अनखाय कुम्हारी, सब को हांक ले गई घर को ।
घू० घ० र० दे० इ० व्या० खर को ॥

आगे गुड़हर, घास नहीं है, गदली पोखर पास नहीं है,
हा ? पानी बिन तड़प रहा है, लोटेर्पाटे इधर उधर को ।
घू० घ० र० दे० इ० व्या० खर को ॥
लीद लपेटा बिकल पड़ा है, चक्र काँच का निकल पड़ा है,
मूत कीच में उछल रही है, ओछी पूंछ डुलाय चमर को ।
घू० घ० र० दे० इ० व्या० खर को ॥
घाइल घोर-कष्ट सहता है, ठौर ठौर शोणित बहता है,
मार मक्खियां भिनक रही हैं, काट रहे हैं कीट कमर को ।
घू० घ० र० दे० इ० व्या० खर को ॥
कुक्कुर तक्कड़ तोड़ चुके हैं, वायस अंखियां फोड़ चुके हैं,
गीदड़ अंतड़ी काढ़ चुके हैं, ताक रहे हैं गिद्ध उदर को ।
घू० घ० र० दे० इ० व्या० खर को ॥
मरण-काल ने दीन किया है, अवगति ने बल-हीन किया है,
मींच घींच धर भींच रही है, खींच रही है प्रेत-नगर को ।
घू० घ० र० दे० इ० व्या० खर को ॥
जीवन खेल खिलाय चुका है, भोग-विलास बिलाय चुका है,
जीव-हंस अब उड़ जावेगा, त्याग पुराने तन-पञ्जर को ।
घू० घ० र० दे० इ० व्या० खर को ॥
ऐसा देख अमंगल इस का, कातर चित्त न होगा किस का,
तन अभिमान भजो रे भाई, करुणा-सिन्धु सत्य-शंकर को ।
घू० घ० र० दे० इ० व्या० खर को ॥ १ ॥

पर-धर्म से हानि ९७

(दोहा)

लाद पराये धर्म का, संकट-भार अतोल ।
तोता पिंजड़े में पड़ा, बोल मनुज के बोल ॥ १ ॥

तोते पर अन्योक्ति ९८

(गीत)

तोते तू तेरे करतब ने,
इस बन्धन में डाला है रे ? ॥ टेक ॥

सुन सीखे जो शब्द हमारे, उन को बोल रहा है प्यारे,
मिट्ठू तुझे इसी कारण से, कनरसियों ने पाला है रे ? ।
तो० ते० क० इ० बं० डाला है रे ? ॥

हा ? कोटर में बास नहीं है, प्यारा कुनबा पास नहीं है,
लोह-तीलियों का घर पाया, अटका कष्ट-कसाला है रे ? ॥
तो० ते० क० इ० बं० डाला है रे ? ॥

सुआ सैंकड़ों पढ़ने वाले, पकड़ बिल्लियों ने खा डाले,
तू भी कल कुत्ते के मुख से, प्राण बचाय निकाला है रे ? ॥
तो० ते० क० इ० बं० डाला है रे ? ॥

पञ्जे नहीं छुड़ा सकते हैं, क्या ये पंख उड़ा सकते हैं,
चोंच न काटेगी पिंजड़े को, शंकर ही रखवाला है रे ? ॥
तो० ते० क० इ० बं० डाला है रे ? ॥१॥

विवेक से शान्ति ९९

(दोहा)

समझी थी संयोग को, मन की भूल वियोग ।
आज विवेकानन्द ने, दूर किया भ्रम-रोग ॥१॥
वस्तु-रूप से एक हैं, आकृति जाति अनेक ।
देह देह में जीव का, दीपक तुल्य विवेक ॥२॥

योग-माधुर्य १००

(सोरठा)

आज बिरह की आग, तुझ से मिलते ही बुझी।
मुझ अबला को त्याग, शंकर ? अब जाना नहीं ॥१॥

योगपर अन्योक्ति १०१

(गीत)

आज मिला बिछुड़ा बर मेरा,
पाया अचल सुहाग री ? ॥ टेक ॥

भबका बेग वियोगानल का, स्रोत जलाया धीरज-जल का,
डूबी सुरत प्रेम—सागर में, बुझी न उर की आग री ? ।
आ० मि० बि० मे० पा० अ० सुहाग री ? ॥

इत, उत थांग लगाती डोली, ठगियों की ठनगई ठठोली,
हुआ न सिद्ध मनोरथ तोभी, और बढ़ा अनुराग री ? ॥
आ० मि० बि० मे० पा० अ० सुहाग री ? ॥

ठौर ठौर भटकी भटकाई, सुधि न प्राण-वल्लभ की पाई,
साहस ने पर हार न मानी, लगी लगन की लाग री ? ॥
आ० मि० बि० मे० पा० अ० सुहाग री ? ॥

एक दया-निधि ने कर दाया, तुरत ठिकाना ठीक बताया,
पहुंची पास पिया शंकर के, इस विधि जागे भाग री ? ॥
आ० मि० बि० मे० पा० अ० सुहाग री ? ॥१॥

संयोग से वियोग १०२

[दोहा]

जीव जन्म से अन्त लों, आयु यथा क्रम भोग।
करते हैं संसार से, योग बिसार वियोग ॥१॥

प्रयाण पर अन्योक्ति १०३

(गीत)

है परसों रात सुहाग की,
दिन बर के घर जाने का ॥टेक॥
पीहर में न रहैगी प्यारी, हा ? होगी हम सब से न्यारी,
चलने की करले तैयारी, बन मूरति अनुराग की,
धर ध्यान उधर जाने का ।
दिन बर के घर जाने का ॥
पातिव्रत से प्यारे पति को, जो पूजेगी धार सुमति को,
तो न निहारेगी दुर्गति को, लगन लगा अति-लागकी,
प्रण रोप निडर जाने का ॥
दिन बर के घर जाने का ॥
गङ्गा पावे सत्य-बचन की, यमुना आवे सेवा-तन की,
हो सरस्वती श्रद्धा-मन की, महिमा प्रकट प्रयाग की,
रच रूपक तरजाने का ।
दिन बर के घर जाने का ॥
शंकर-पुर को तू जावेगी, सुख-संयोगामृत पावेगी,
गीत महोत्सव के गावेगी, सुधि विसार कुल-त्याग की,
सखी सोच न कर जाने का ॥
दिन बर के घर जाने का ॥१॥

अन्योक्ति से योग शिक्षा १०४

(दोहा)

ज्ञातयौवना हो चुकी, गुड़ियों से मत खेल ।
पूरा पूरा कर सखी, शंकर-पिय से मेल ॥ १ ॥

अन्योक्ति से उपदेश १०५

(गीत)

सजले साज सजीले सजनी,
मान बिसार मनाले बर को ॥ टेक ॥

गौरव—अङ्गराग मलवाले, मेल-मिलाप तेल डलवाले,
न्हाले शुद्ध-सुशील-सलिल से, काढ़ कुमति-मैली चादर को ।
स० सा० म० स० मा० म० बर को ॥

ओढ़ सुमति की उज्ज्वल सारी, सद्गुण-भूषण धार दुलारी,
सीस गुँदाय नीति-नाइन से, कर टीका करुणा-केसर को ॥
स० सा० स० स० मा० म० बर को ॥

आदर-अंजन आंज नवेली, खाकर प्रेम-पान अलबेली,
धार प्रसिद्ध-सुयश की शोभा, दमका ले आनन-सुन्दर को,
स० सा० स० स० मा० म० बर को ॥

मेरी बात मान! अवसर है, यौवन—काल बीत ने पर है,
तू यदि अब न रिझावेगी तो, फिर न सुहावेगी शंकर को ।
स० सा० स० स० मा० म० बर को ॥ १ ॥

उपदेशकोंद्वारा उद्धार १०६

[दोहा]

ब्रह्म—विवेकानन्द से, जीवन, जन्म सुधार ।
करते हैं संसार का, उपदेशक उद्धार ॥ १ ॥

सुधारक—सिद्ध—समूह १०७

(सुन्दरी-सवैया)

इस स्वर्ग-सहोदर—भारत का, शुभ-वैदिक-वीर सुधार करेंगे ।
अपनाय प्रथा-मुनि-मण्डल की, कवि शंकर! धर्म-प्रचार करेंगे ॥

अनुकूल-अखण्ड-तपोबल पै, व्रतशील निरन्तर प्यार करेंगे ।
कर मेल अमायिक आपस में, सुकृती सब का उपकार करेंगे ॥१॥

धर्म–घोषणा १०८

(दोहा)

काढो मानव–जाति के, जीवन का शुभ–सार ।
साधु ! सुधारो देश को, सामाजिक–बल धार ॥ १ ॥

धर्मवीरों की कर्म–वीरता १०९

(मायात्मक-लावनी)

जिन को उत्तम उपदेश, महा–फल पाया ।
उन अनघों ने अखिलेश, एक अपनाया ॥ टेक ॥
बन गये सुबोध, विनीत, ब्रह्म—अनुरागी ।
उमगे बल, पौरुष पाय, शिथिलता त्यागी ॥
कर सिद्ध विविध व्यापार, कर्म–जय जागी ।
उन्नति का देख उठान, अधोगति भागी ॥
फटके जिन के न समीप, मोह—मय–माया ।
उन अनघों ने अखिलेश, एक अपनाया ॥ १ ॥

सब ने सब दोष बिसार, दिव्य–गुण धारे ।
तज बैर निरन्तर—प्रेम–प्रसंग प्रचारे ॥
चेतन, जीवित, ऋषि, देव, पितर, सत्कारे ।
कर दिये दूर खल–खर्ब, कुमति के मारे ॥
जिन के कुल में सुख-मूल, सुधार समाया ।
उन अनघों ने अखिलेश, एक अपनाया ॥ २ ॥

मंगल-कर वैदिक-कर्म, किया करते हैं।
ध्रुव-धर्म-सुधा भर पेट, पिया करते हैं॥
भर-शक्ति यथा-विधि दान, दिया करते हैं।
कर जीवन, जन्म पवित्र, जिया करते हैं॥
जिन का शुभ-काल कुयोग, मिटा कर आया।
उन अनघों ने अखिलेश, एक अपनाया॥ ३॥

द्विज ब्रह्मचर्य-व्रत-शील, वेद पढ़ते हैं।
गौरव-गिरि पै प्रण रोप, रोप चढ़ते हैं॥
अभिलषित-लक्ष्य की ओर, वीर बढ़ते हैं।
गुरु-कुल-सागर से रत्न, रूप कढ़ते हैं॥
जग--जीवन जिन के वंश, विटिप की छाया।
उन अनघों ने अखिलेश, एक अपनाया॥ ४॥

नव-द्रव्य-जन्य-गुण, दोष, भेद, पहँचाने।
कृषि-कर्म रसायन, शिल्प, यथा-विधि जाने॥
दर्शन, ज्योतिष, इतिहास, पुराण बखाने।
पर जटिल-गपोड़ वेद विरुद्ध न माने॥
सब ने कोविद, कविराज, जिन्हे बतलाया।
उन अनघों ने अखिलेश, एक अपनाया॥ ५॥

विदुषी-दुलहिन पौगण्ड, विज्ञ वरते हैं।
बल-नाशक-बाल-विवाह, देख डरते हैं॥
विधवा-बर बन वैधव्य, दूर करते हैं।
अथवा नियोग-फल सौंप, शोक हरते हैं॥
जिन की विधि ने कुलबोर, निषेध मिटाया।
उन अनघों ने अखिलेश, एक अपनाया॥ ६॥

ऋजु-गति-शासन को शुद्ध, न्याय कहते हैं।
कटु-कुटिल-नीति से दूर, सदा रहते हैं॥
समुचित-पद्धति की गम्य, गैल गहते हैं।
अनुचित-कुचाल का दर्प, नहीं सहते हैं॥
अभिमान-अधम का भाव, न जिनको भाया।
उन अनघों ने अखिलेश, एक अपनाया॥ ७॥

घर छोड़ देश पर-देश, निडर जाते हैं।
व्यवसाय-शील सब ठौर, सुयस पाते हैं॥
अति-शुद्ध अनामिष-अन्न, सरस खाते हैं।
पर छुआ छूत रच दम्भ, न दिखलाते हैं॥
जिन का व्यवहार-बिलास, प्रशस्त कहाया।
उन अनघों ने अखिलेश, एक अपनाया॥ ८॥

हित कर अपना प्रत्येक, शुद्ध-जीवन से।
मन-शुद्ध, किये मल दूर, गिरा से तन से॥
मठ कपट-मतों के फोड़, उग्र-खराडन से।
जड़-पूजन की जड़ काट, मिले चेतन से॥
जिन के आचरण विलोक, लोक ललचाया।
उन अनघों ने अखिलेश, एक अपनाया॥ ९॥

रच ग्रन्थ घने प्रिय-पत्र, अनेक निकाले।
बन कर गोपाल, अनाथ, अकिञ्चन पाले॥
नर, नारि अवैदिक भिन्न, भिन्न मत वाले।
रच वर्ण-यथा-गुण-कर्म, शुद्ध करडाले॥
शंकर ने जिन पर धर्म, मेघ बरसाया।
उन अनघों ने अखिलेश, एक अपनाया॥ १०॥

रामलीला ११०

(दोहा)

साधन है सद्धर्म का, राम-चरित्र उदार ।
प्यारे ! अपना ले इसे, जीवन, जन्म सुधार ॥ १ ॥

(मायात्मक-लावनी)

प्रभु शंकर को अपनाय, समाज सुधारो ।
पढ़ राम-चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो ॥ टेक ॥
सुत—हीन-दीन-अवधेश, घना घबराया ।
गुरु से सदुपाय विषाद, सुना कर पाया ॥
शृङ्गी ऋषि बरद बुलवाय, सुयाग रचाया ।
खाकर हवि-शेष सगर्भ, हुई नृप-जाया ॥
मख-महिमा यों सब ओर, सुबुध बिस्तारो ।
पढ़ राम-चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो ॥१॥

धन कौशल्या! सुख-सदन, राम जनमाये ।
केकय-तनया ने भरत, भागवत जाये ॥
सौमित्र सहोदर लखन, अरिघ्न कहाये ।
सुत—वेद-चुतुष्टय—रूप, नृपति ने पाये ॥
उपजें इस भाँति सु पुत्र, मिलें×फल चारो ।
पढ़ राम-चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो ॥ २ ॥

प्रकटे अवनीश-कुमार, मनोहर प्यारे ।
करते मिल बाल-विनोद, बन्धु-बर चारे ॥

× फल चारो=धर्म १ अर्थ २ काम ३ मोक्ष ४।

गुरु-कुल में रहे समोद, धर्म—धर धारो।
पढ़ वेद बोध—बल पाय, बसे घर चारो॥
इमि ब्रह्मचर्य—व्रत धार, विवेक पसारो।
पढ़ राम—चरित्र—पवित्र, मित्र उर धारो॥ ३॥

रघुराज—रजायुस पाय, बाण, धनु धारे।
मुनि साथ राम—अभिराम, सबन्धु सिधारे॥
गुरु-कौशिक से गुण सीख, सांमरिक सारे।
मख—मंगल-मूल रखाय, असुर संहारे॥
ऋषि-रक्षक यों बन वीर, दुष्ट—दल मारो।
पढ़ राम—चरित्र—पवित्र, मित्र उर धारो॥ ४॥

मुनि-गाधि-पुत्र भट श्याम, गौर बल-धारी।
पहुँचे मिथिलापुर राज, विभूति निहारी॥
शिव-धनुष राम ने तोड़, पाय यश भारी।
ब्याही विधि सहित समोद, विदेह—कुमारी॥
करिये इस भांति बिबाह, कुलीन-कुमारो।
पढ़ राम—चरित्र—पवित्र, मित्र उर धारो॥ ५॥

अब लखन, जानकी, राम, अवध में आये।
घर घर बाजे सुख—मूल, बिनोद—बधाये॥
हित, प्रेम, राज—कुल और, प्रजा पर छाये।
सब ने दिन बैर—विरोध, बिसार बिताये॥
इस भाँति रहो कर मेल, भले परिवारो।
पढ़ राम—चरित्र—पवित्र, मित्र उर धारो॥ ६॥

नृप ने सुख का सब ठौर, बिलोक बसेरा ।
कर जोड़ कहा यह ईश, सुयश है तेरा ॥
अब राम बने युवराज, भरे मन मेरा ।
रवि--वंश दिपे कर अस्त, अधर्म--अँधेरा ॥
सुत-सज्जन का इस भाँति, सुभद्र बिचारो ।
पढ़ राम--चरित्र--पवित्र, मित्र उर धारो ॥७॥

अभिषेक--कथा सुन मित्र, अमित्र, उदासी ।
उलही मिल सब की चाह, कल्प-लतिका सी ॥
बर कैकय--तनया माँग, उठी कुदशा सी ।
युव-राज भरत हो राम, बने वन--वासी ॥
कर यों कुनारि पर प्यार, न जीवन हारो ।
पढ़ राम--चरित्र--पवित्र, मित्र उर धारो ॥८॥

सुन, देख, कराल, कठोर, कुहाव--कहानी ।
बरजी परिणाम सुझाय, न समझी रानी ॥
जब मरण-काल की व्याधि, कुपति ने जानी ।
उमड़ा तब शोक--समुद्र, बहा बर दानी ॥
बर नारि अनेक न उग्र, अनीति उधारो ।
पढ़ राम--चरित्र--पवित्र, मित्र उर धारो ॥९॥

सुधि पाकर पहुँचे राम, राज-दर्शन को ।
सकुचे पग पूज कुदृश्य, न भाया मन को ॥
सुन बचन पिता के मान, धर्म--पालन को ।
कर जोड़ कहा अब तात!, चला मैं वन को ॥
पितु पायक यों बन धाम, धरा--धन वारो ।
पढ़ राम-चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो ॥१०॥

मिल कर जननी से माँग, असीस, बिदाई
हठ जनक सुता की भक्ति, भरी मन भाई ॥
सुन लक्ष्मण का प्रण-पाठ, कहा चल भाई ! ।
घर तज सानुज-सस्त्रीक, चले रघुराई ॥
निज नारि-सती, प्रिय-बन्धु, न वीर बिसारो ।
पढ़ राम-चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो ॥ ११ ॥

पहुँचे पुनि पितु के पास, अवध के प्यारे ।
झट भूषण, वस्त्र उतार, साधु-पट धारे ॥
सब से मिल-भेंट सु भोग, बिलास बिसारे ।
रथ पै चढ़ वन की ओर, सशस्त्र सिधारे ॥
बन कर्म-वीर इस भांति, स्वभाव सँवारो ।
पढ़ राम-चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो ॥ १२ ॥

तमसा तक पहुंचे लोग, प्रेम-रस-पागे ।
तट पै बिन-चेत प्रसुप्त, पड़े सब त्यागे ॥
सिय, राम, सचिव, सौमित्र, चल दिये आगे ।
उठ भोर, गये घर लौट, अधीर-अभागे ॥
मन को इस भाँति वियोग, उदधि से तारो ।
पढ़ राम-चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो ॥ १३ ॥

रथ शृङ्गवेरुपुर तीर, वीर-बर लाये ।
गुह ने मिल भेंट समोद, उतार टिकाये ॥
सब ने वह रात बिताय, न्हाय, फल खाये ।
रघुनायक ने समझाय, सचिव लौटाये ॥
सुजनों पर यों अनुराग, बिभूति बगारो ।
पढ़ राम-चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो ॥ १४ ॥

सुर-सरिता-तीर नवीन,-विरक्त पधारे।
पग धोय +धनुक ने पार, तुरन्त उतारे॥
पहुंचे प्रयाग पूतशील, स्वदेश-दुलारे।
मुनि-मण्डल ने हित प्रेम, पसार निहारे॥
इस भांति अतिथि को पूज, सदय सत्कारो।
पढ़ राम-चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो॥१५॥

गुरु-भरद्वाज ने सुगम, गैल बतलाई।
यमुना को उतरे सहित, सीय दोऊ भाई॥
निशि बाल्मीक मुनि निकट, सहर्ष बिताई।
चढ़ चित्रकूट पै विरम, रहे रघुराई॥
इस भाँति सहो सब कष्ट, दयालु उदारो।
पढ़ राम-चरित्र-पवित्र, मित्र उरधारो॥ १६॥

बन से न फिरे रघुनाथ, न लक्ष्मण सीता।
पहुँचा सुमंत्र नृप तीर, धीर धर जीता॥
बिलखे नर नारि निहार, खड़ा रथ रीता।
दशरथ का जीवन--काल, राम बिन बीता॥
मरना इस भाँति न ज्ञान, गमाय गमारो।
पढ़ राम चरित्र पवित्र, मित्र उर धारो॥ १७॥

गुरु ने परिताप अँगार, अनेक बुझाये।
सुधि भेज भरत, शत्रुघ्न, तुरन्त बुलाये॥
नृप का शव दाह कराय, सुधी समझाये।
पर वे परपद का लोभ, न मन में लाये॥

+ धनुक = केवट – मल्लाह –

बस अनधिकार की ओर, न वीर निहारो ।
पढ़ राम–चरित्र–पवित्र,–मित्र उर धारो ॥१८॥

धर घोर अमङ्गल–मूल, अनीति निहारी ।
समझी अवनति का हेतु, सगी महतारी ॥
सकुचे रघुपति की गैल, चले प्रण धारी ।
लग लिया भरत के साथ, दुखी दल भारी ॥
धर पकड़ वैर की फूट, फोड़ फट कारो ।
पढ़ राम–चरित्र–पवित्र,–मित्र उर धारो ॥ १९ ॥

मिल भेंट लिया गुह साथ, प्रयाग अन्हाये ।
चढ़ चित्रकूट पर प्रेम, प्रवाह बहाये ॥
प्रभु पाहि नाम कर दण्ड, प्रणाम सुनाये ।
झपटे सुन राम उठाय, कण्ठ लिपटाये ॥
इस भांति मिलो,कुल-धर्म,-अशोक-कुठारो ।
पढ़ राम–चरित्र–पवित्र,–मित्र उर धारो ॥२०॥

सब ने मिल भेंट समिष्ट, प्रसङ्ग बखाना ।
सुन मरण पिता का राम कुछ दुख माना ॥
पर ठीक न समझा लौट, नगर को जाना ।
+जड़-भरत पादुका पाय, फिरे प्रण ठाना ॥
व्रत-जल से विधि के पैर, सुपुत्र पखारो ।
पढ़ राम–चरित्र–पवित्र, मित्र उर धारो ॥२१॥

कर जोड़ जोड़,कर, यत्न, अनेक मनाये ।
पर डिगे न प्रण से राम, महाबल पाये ॥

+ जड़ भरत=राम के प्रेम से अधीर होकर सुधबुध भूलगये ।

हिय हार हार नर नारि, अवध में आये।
बिन बन्धु भरत ने दीन, बन्धु अपनाये॥
प्रतिनिधि बन औरों कीन, धरोहर मारो।
पढ़ राम-चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो॥२२॥

परिवार, प्रजा कुल से न, कभी मुख मोड़ा।
मनु-हायन भर को नेह, विपिन से जोड़ा॥
नटखट वायस का अक्ष, मार शर फोड़ा।
गिरि-चित्र कूट बहु काल, बिता कर छोड़ा॥
विचरो सब देश विदेश, विचार प्रचारो।
पढ़ राम-चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो॥२३॥

अब दण्डक-वन का दिव्य,-दृश्य मन भाया।
बध कर बिराध को गाढ़, कुयोग मिटाया॥
मुनि मण्डल को पग पूज, पूज अपनाया।
फिर पंचवटी पर जाय, बसे सुख पाया॥
समझो समाज के काज, कृपा कर सारो।
पढ़ राम-चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो॥२४॥

तरु फूल फले छवि राम,-कुटी पर छाई।
धर सूर्पनखा बर-वेष, अचानक आई॥
कुल-बोर मनोरथ-सिद्ध, नहीं कर पाई।
कर लक्ष्मण ने श्रुति नाक, विहीन हटाई॥
इमि एक नारि-व्रत-शील, रहो जड़-जारो।
पढ़ राम-चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो॥२५॥

नकटी खर, दूषण-सेन, चढ़ा कर लाई।
रघुपति ने सब को मार, काट जय पाई॥

फिर रावण की करतूति, समस्त सुनाई ।
सुन मान बहन की बात, चला भट-भाई ॥
धिक् नाक कटाय न ठौर, ठौर झखमारो ।
पढ़ राम--चरित्र--पवित्र, मित्र उर धारो ॥२६॥

चढ़ पञ्चवटी पर दुष्ट, *दशानन आया ।
मिल कर मारीच कुरङ्ग, बना रच माया ॥
सिय ने पिय को पशु-बध्य, विचित्र बताया ।
झट राम उठे शर-लक्ष्य, पिशाच बनाया ।।
छल-मैल हटा कर न्याय, सु नीर निथारो ।
पढ़ राम-चरित्र--पवित्र, मित्र उर धारो ॥२७॥

मृग भाग चला विकराल, विपति ने घेरा ।
रघुनायक ने खल खेल, खिलाय खदेरा ॥
शर खाय मरा इस भाँति, पुकार घनेरा ।
चल, दौड़, सुहृद-सौमित्र, दुःख हर मेरा ॥
जमता न कपट का रङ्ग, सदैव लबारो ।
पढ़ राम-चरित्र--पवित्र, मित्र उर धारो ॥२८॥

सुन घोर अमंगल-नाद, दुष्ट-सम्मति का ।
सिय ने समझा वह बोल, प्रतापी पति का ॥
उस ओर लखन को भेज, तोख दे अति का ।
रह गई कुटी पर खोल, द्वार दुर्गति का ॥
भ्रम, भेद, भूल, भय, शोक, लुके ललकारो ।
पढ़ राम-चरित्र--पवित्र, मित्र उर धारो ॥२९॥

* दशों दिशाओं में रावण का कोई रोक ने बाधा नहीं था इसी कारण से उस का एक नाम "दशानन" भी पड़गया -

मुनि बन पहुँचा लंकेश, कुशील पुकारा ।
यति जनक-सुता ने जान, असुर सत्कारा ॥
पकड़ी ठग ने निज-मींच, अमङ्गल-धारा ।
हित कर कुलटा का बज्र, सती पर मारा ॥
अधमाधम को सब साधु, अधिक धिक्कारो ।
पढ़ राम-चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो ॥ ३० ॥

हर जनक सुता को मूढ, महाधम लाया ।
मगमें प्रचण्ड रण रोप, जटायु गिराया ॥
चढ़ व्योम-यान पर नीच, निरङ्कुश आया ।
रखली घर पाप कमाय, हाय पर-जाया ॥
मत चोर बनो कुल-बोर, बलिष्ट बिजारो ।
पढ़ राम-चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो ॥ ३१ ॥

मृग-रूप-निशाचर मार, फिरे रघुराई ।
अध बर में बन्धु बिलोक, बिकलता छाई ।
मिल कर आश्रमको लौट, गये दोऊ भाई ॥
पर जनकनान्दिनी हा! न, कुटी पर पाई ।
ध्रुव-धर्म-धुरन्धर-धीर, अनिष्ट सहारो ।
पढ़ राम-चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो ॥ ३२ ॥

अति व्याकुल सानुज-राम, विरह के मारे ।
सब ओर फिरे सब ठौर, अधीर पुकारे ॥
गिरि, गह्वर, कानन, कुंज, कछार, निहारे ।
पर मिला न सिय का खोज, खोज कर हारे ॥
इस भांति वियोग-समुद्र, सराग मझारो ।
पढ़ राम-चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो ॥ ३३ ॥

कढ़ गई किधर को लाँघ, धनुष की रेखा।
इस भाँति किया अनुराग, पसार परेखा॥
मग में फिर घाइल-अङ्ग, गृद्ध-पति देखा।
मर गया सुना कर सीय, हरण का लेखा॥
उपकार करो कर कोटि, उपाय उदारो।
पद राम-चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो॥३४॥

सुन रावण की कर तूति, जटायु जलाया।
निरखे वन, मार कबन्ध, वसन्त न भाया॥
फिर शवरी के फल खाय, महेश मनाया।
टिक पम्पापुर पर ऋष्य,-मूकपुनि पाया॥
कर पौरुष मानव-धर्म, स्वरूप निखारो।
पद राम-चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो॥३५॥

रघुनाथ लखन को देख, कीश घबराये।
समझे विधि क्या? भटबालि, प्रबल के आये॥
बन बिप्र मिले हनुमान, पीठ धर लाये।
नर वानर-पति ने पूज, सुमित्र बनाये॥
कर मेल पियो इस भाँति, प्रेम-रस प्यारो।
पद राम-चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो॥३६॥

रघुनायक ने निज-वृत्त, समस्त बखाना।
सुन कर हरीश का हाल, घना दुख माना॥
शुभ समझ बन्धु से बन्धु, सभेद लड़ाना।
मख बालि-निधन का ठोस, ठसक से ठाना॥
दृढ़ टेक टिका कर सत्य, वचन उचारो।
पद राम-चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो॥३७॥

शर मार मही पर हाड़, ताड़.तरु, डाले ।
फिर कहा विजय सुग्रीव, बालि पर पाले ।।
ललकार लड़े हरि-वन्धु, कुभाव निकाले ।
लुक रहे विटप की ओट, राम रखवाले ।।
दब को करिये पर काज, न खांस मठारो ।
पढ़ राम-चरित्र--पवित्र, मित्र उर धारो ।। ३८ ।।

समझे जब राम, सुकण्ठ, समर में हारा ।
तब तुरत बालि बलवान, मार शर मारा ।।
फिर अङ्गद को अपनाय, मना कर तारा ।
कर दिया सखा कपि-राज, मिटा दुख सारा ।।
ढकलो अति-गूढ़--महत्व, प्रमाण-पिटारो ।
पढ़ राम--चरित्र--पवित्र, मित्र उर धारो ।। ३९ ।।

अभिषेक हुआ सुख-साज, समङ्गल साजे ।
अभिनन्दन--सूचक--शंख, ढोल, ढप, बाजे ।।
उमगी बरसात खगोल, घेर घन गाजे ।
पर्वत पर बिरही राम, सबन्धु बिराजे ।।
तज कपट सुमित्रादर्श, बनो सब यारो ।
पढ़ राम-चरित्र--पवित्र, मित्र उर धारो ।। ४० ।।

सुख रहित राम ने गीत, विरह के गाये ।
बरसात गई दिन शुद्ध, शरद के आये ।।
कपिनायक ने भठ--कीश, भालु बुलवाये ।
सिय की सुधि को सब, ओर बरूथ पठाये ।।
करिये प्रिय-प्रत्युपकार, सुचरितागारो ।
पढ़ राम--चरित्र--पवित्र, मित्र उर धारो ।। ४१ ।।

रघुपति ने सिय के चिन्ह, विशेष बताये ।
मुँदरी लेकर हनुमान, ससैन सिधाये ॥
निरखे परखे सब देश, सिन्धु-तट आये ।
पर लगी न कुछ भी थाँग, थके अकुलाये ॥
तजिये न अनुष्ठित-कर्म, सुकृत आधारो ।
पढ़ राम--चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो ॥ ४२ ॥

सब कहैं मरे प्रभु--काज, नहीं कर पाया ।
सुन कर उमगा सम्पाति, पता बतलाया ॥
उछला जलनिधि को लाँघ, प्रभञ्जन जाया ।
रिपु--गढ़ में किया प्रवेश, क्षुद्र कर काया ॥
फल मान असम्भव का न, प्रवीण बनारो ।
पढ़ राम--चरित्र--पवित्र, मित्र उर धारो ॥ ४३ ॥

सिय का उपताप घटाय, दूर कर शङ्का ।
कपि हुआ प्रसिद्ध बजाय, विजय का डंका ॥
बँध गया, छुटा, खुल खेल, जला कर लङ्का ।
चल दिया शिरोमणि पाय, वीर--बर--बंका ॥
कर स्वामि-काज इस भाँति, कूद किलकारो ।
पढ़ राम--चरित्र--पवित्र, मित्र उर धारो ॥ ४४ ॥

कर काज मिला हनुमान, भालु कपि ऊले ।
पहुँचे सुकण्ठ--पुर पेड़, पेड़ पर झूले ॥
प्रभु को सब हाल सुनाय, खाय फल फूले ।
मणि-जनक-सुता की देख, राम सुधि भूले ॥
कर विनय प्रेम--प्रासाद, बिनीत--बुहारो ।
पढ़ राम--चरित्र--पवित्र, मित्र उर धारो ॥ ४५ ॥

रघुवर ने सिय की थाँग, सुनिश्चित पाई ।
करदी रिपु-गढ़ की ओर, तुरन्त चढ़ाई ॥
कपि-भालु-चमू प्रभु साथ, असंख्य सिधाई ।
अविराम चली भट-भीड़, सिन्धु-तट आई ॥
अनघा-धन को कर यत्न, अनेक उबारो ।
पढ़ राम--चरित्र--पवित्र,--मित्र उर धारो ॥४६॥

हठ पकड़ रहा लंकेश, सुमंत्र न माना ।
चल दिया विभीषण बन्धु, काल-वश जाना ॥
समझा रघुपति के पास, पुनीत ठिकाना ।
मिल गया कटक में दास, कहाय बिराना ॥
बस यों सिर से भय-भार, न भीरु उतारो ।
पढ़ राम--चरित्र--पवित्र, मित्र उर धारो ॥४७॥

पुल बाँध जलधि का पार, गये दल सारे ।
उतरे सुवेल पर राम, सबन्धु सुखारे ॥
पहुँचा अङ्गद बन दूत, बचन बिस्तारे ।
करले रघुपति से मेल, दशानन प्यारे ॥
अरि-कुल का भी घर घेर, वृथा न उदारो ।
पढ़ राम--चरित्र--पवित्र, मित्र उर धारो ॥४८॥

सुन बालि-तनय की बात, न ठग ने मानी ।
छल-बल-पावक पर हा! न, पड़ा हित-पानी ॥
रघुनायक ने अनरीति, असुर की जानी ।
कर कोप उठे भट-मार, ठना ठन ठानी ॥
अधमाधम रिपु को शूर, सकुल संहारो ।
पढ़ राम--चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो ॥४९॥

चट पट रण-चण्डी चेत, चढ़ी कर तोले ।
झट नयन रुद्र ने तीन, प्रलय के खोले ॥
गरजे जय के हरि, स्यार, अजय के बोले ।
हलचल में हर्ष, विषाद, थिरकते डोले ॥
इस भाँति महारण रोप, हुमक--हुंकारो ।
पढ़ राम--चरित्र--पवित्र, मित्र उर धारो ॥ ५० ॥

भिड़ गये भालु, कपि वृन्द, वीर--रिपु-घाती ।
झटके रजनीचर--चोर, बधिक--उत्पाती ॥
छुपगया छेद घननाद, लखन की छाती ।
झट लेपहुँचे प्रभु पास, सुदत्त--सँगाती ॥
अति कष्ट पड़े पर धीर, न हिम्मत हारो ।
पढ़ राम--चरित्र--पवित्र, मित्र उर धारो ॥ ५१ ॥

बिनचेत अनुज को देख, राम घबराये ।
हनुमान द्रोण-गिरि-जन्य, महोषधि लाये ॥
कर शीघ्र शल्य-प्रतिकार, सुखेन सिधाये ।
उठ बैठे लखन, सशोक, समस्त सिहाये ॥
बन पौरुष--पङ्कज--भृङ्ग, सुजन गुंजारो ।
पढ़ राम--चरित्र--पवित्र, मित्र उर धारो ॥ ५२ ॥

उठ कुम्भकर्ण-रण-धीर, अड़ा मतवाला ।
समझे कपि, भालु सजीव, महीधर--काला ॥
रघुनायक ने इषु मार, व्यग्र कर डाला ।
तन खण्ड खण्ड कर माया,-प्रपञ्च निकाला ॥
प्रतिभट-पिशाच के अङ्ग, अवश्य विदारो ।
पढ़ राम--चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो ॥ ५३ ॥

मचगया घना घमसान, हुआ अँधियारा ।
भट कटें कटक में युद्ध, प्रचण्ड पसारा ॥
तड़पें तन, उगलें लोथ, रुधिर की धारा ।
घननाद अभय-सौमित्र, सुभट ने मारा ॥
यति-वीर-महाव्रत-शील, विपत्ति बिड़ारो ।
पढ़ राम-चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो ॥ ५४ ॥

उजड़े घर, सैन समेत, कुटुम्ब कटाया ।
अब जनक-सुता का चोर, समर में आया ॥
रच रच माया बल-दर्प, सदम्भ दिखाया ।
पर बचा न रावण राम,-विजय ने खाया ॥
खल-दल को मार मिटाय, कु-भार उतारो ।
पढ़ राम-चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो ॥ ५५ ॥

कर सकल हेम-प्रासाद, नगर के रीते ।
कट मरे निशाचर वीर, भालु,कपि जीते ॥
रघुबर बोले दिन आज, बिरह के बीते ।
अबतो मिल मङ्गल मान, सुवदना सीते! ॥
बिछुड़ी बनिता पर प्रेम, सुरुचि संचारो ।
पढ़ राम-चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो ॥ ५६ ॥

विधवा-दल का परिताप, विलाप मिटाया ।
अवनीश बिभीषण वंश,-वरिष्ठ बनाया ॥
सिय से रघुनाथ सबन्धु, मिले सुख पाया ।
दिन फिरे अवध के ध्यान, भरत का आया ॥
निज जन्म भूमि पर प्रेम, अवश्य प्रसारो ।
पढ़ राम-चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो ॥ ५७ ॥

फिर पुष्पक पै कपि भालु, प्रधान चढ़ाये ।
चढ़ लखन जानकी राम, चले घर आये ॥
गुरु, मात, बन्धु-प्रिय, दास, प्रजा-जन पाये ।
सब ने मिल भेंट समोद, शम्भु-गुण गाये ॥
बिछुड़ो! कर मेल मिलाप, प्रवास बिसारो ।
पढ़ राम-चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो ॥ ५८ ॥

सिय, राम, भरत, सौमित्र, मिले अनुरागे ।
पट, भूषण सुन्दर धार, वन्य-व्रत त्यागे ॥
उमगे सुख-भोग-बिलास, विघ्न, भय भागे ।
अपनाय अभ्युदय-भव्य, राज-गुण जागे ॥
चमको अब छार छुड़ाय, ज्वलित अङ्गारो ।
पढ़ राम-चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो ॥ ५९ ॥

अभिमंत्रित मंगल-मूल, साज सब साजे ।
प्रभुतासन पै रघुनाथ, सशक्ति बिराजे ॥
घर घर गायन, वादित्र, मनोहर बाजे ।
सुनते ही जय जय कार, राज-गज गाजे ॥
बनिये शंकर इस भाँति-, धर्म-अवतारो ।
पढ़ राम-चरित्र-पवित्र, मित्र उर धारो ॥ ६० ॥

ऋतु-राज-रहस्य १११

(दोहा)

छूटे शीत, निदाघ लों, जिस की छवि के छोर ।
फूल रहा देखो सखा, उस वसन्त की ओर ॥ १ ॥

वसन्त-विकाश ११२

(गीत)

छवि-ऋतु-राज कीरे,
अपनी ओर निहार, निहारो ॥ टेक ॥

घटती हैं घड़ियां रजनी की, बढ़ता है दिन-मान ।
सकुचेगी इस भाँति अविद्या, विकसेगा गुरु-ज्ञान ॥
छ० ऋ० की० अ० ओ० नि० निहारो ॥

कर पतझाड़ चढ़ी पेड़ों पै, हरियाली भरपूर ।
यों अवनति को उन्नति द्वारा, अब तो करदो दूर ॥
छ० ऋ० की० अ० ओर नि० निहारो ॥

छदन बेलि, वृक्षों पर छाये, रहे अपर्ण करील ।
मन्द सुअवसर पाते तोभी, बने न वैभव-शील ॥
छ० ऋ० की० अ० ओ० नि० निहारो ॥

उलहे गुल्म, लता, तरु सारे, अंकुर कोमल-काय ।
जैसे न्याय-परायण-नृप की, प्रजा बढ़े सुख पाय ॥
छ० ऋ० की० अ० ओ० नि० निहारो ॥

हार हरे, कर दिये वसन्ती, सरसों ने सब खेत ।
मानो सुमति मिली सम्पति से; धर्म, सुकर्म समेत ॥
छ० ऋ० की० अ० ओ० नि० निहारो ॥

मधुर-रसीले फल देने को, बौरे सघन-रसाल ।
जैसे सकल सुलक्षण, धारें, होनहार कुल-पाल ॥
छ० ऋ० की० अ० ओ० नि० निहारो ॥

बिमड़े फुलबुन्दे कदम्बके, कलियानी कचनार ।
बन बैठे धन हीन धनी यों, निर्धन कमलाधार ॥
छ० ऋ० की० अ० ओ० नि० निहारो ॥

धौरे सुमन सुगन्धित धारें, सदल सेवती, सेव ।
मानो शुद्ध-सुयश दर साते, हिलमिल देवी, देव ॥
छ० ऋ० की० अ० ओ० नि० निहारो ॥

गेंदा खिले कुसुम केसरिया, पाटल-पुष्प अनूप ।
किम्वा सहित समाज विराजे, बुध-मंत्री, गुरु-भूप ॥
छ० ऋ० की० अ० ओ० नि० निहारो ॥

फूल रहे सर में रस बाँटें, उपकारी-अरविन्द ।
दान पाय गुण-गण गाते हैं, याचक-बृन्द-मिलिन्द ॥
छ० ऋ० की० अ० ओ० नि० निहारो ॥

फूले मसि-मिश्रित-अरुणारे, किंशुक सौरभ हीन ।
विचरें यथा असाधु रँगीले, ज्ञानशून्य तन-पीन ॥
छ० ऋ० की० अ० ओ० नि० निहारो ॥

अरुण फूल फूले सेमर के, प्रकट कोश-गम्भीर ।
क्या लोहित-मणि की कुलियों में, माँगरहे मधु वीर ?॥
छ० ऋ० की० अ० ओ० नि० निहारो ॥

बढ़ बढ़ गण सत्यानाशी के—विकसे कण्टक धार ।
किम्वा विशद-वेष-कटु-भाषी, वञ्चक करें विहार ॥
छ० ऋ० की० अ० ओ० नि० निहारो ॥

सुमन, मंजरी बरसाते हैं, बन, बीहड़, आराम ।
क्या शर मार मार रसिकों से, अटक रहा है काम ?॥
छ० ऋ० की० अ० ओ० नि० निहारो ॥

पुष्प-पराग, सुगन्ध उड़ाता, शीतल-मन्द-समीर ।
यों सब को सुख पहुँचाता है, धर्म—धुरन्धर—धीर ॥
छ० ऋ० की० अ० ओ० नि० निहारो ॥

कोकिल कूँजें, मधुकर गूँजें, बोलें विविध विहंग ।
क्या मिल रहे साम-गायनसे, मुरली, वेणु, मृदंग ? ॥
छ० ऋ० की० अ० ओ० नि० निहारो ॥
त्याग विरोध मिले समतासे, सरदी और निदाघ ।
बैर बिसार तपोवन में ज्यों, साथ रहें मृग, बाघ ॥
छ० ऋ० की० अ० ओ० नि० निहारो ॥
रसिक-शत्रु वासन्ती-विधि का, करते हैं अपमान ।
ज्यों रस भाव भरी कविता को, सुनते नहीं अजान ॥
छ० ऋ० की० अ० ओ० नि० निहारो ॥
भर देता है भारत भर में, मधु आनन्द, उमङ्ग ।
भङ्ग पिला कर शंकर का भी, करडाला व्रत-भङ्ग ॥
छ० ऋ० की० अ० ओ० नि० निहारो ॥१॥

पञ्च देव ११३

(दोहा)

इष्ट-देव-संसार का, शङ्कर—जगदाधार ।
शिष्ट-देव-माता, पिता, गुरु, अभ्यागत चार ॥१॥

देवचतुष्टय ११४

(गीत)

वैदिक विद्वान बताते हैं,
साकार देवता चार ॥टेक॥
माता ने जन कर पाला है, कौन पिता सा रखवाला है,
सेवक ! सेवा कर दोनों की, सविनय बारम्बार ।
वै० वि० ब० सा० देवता चार ॥

जिस ने चारों वेद पढ़ाये, शुद्धाचार विचार बढ़ाये,
उस विद्या-धारी सद्गुरको, पूज! प्रमाद बिसार ॥
वै० त्रि० ब० सा० देवता चार ॥

खोटी गैल न जो अपनावे, सब को सीधा पन्थ बतावे,
ऐसे धर्माधार अतिथि का, कर स्वागत—सत्कार ॥
वै० त्रि० ब० सा० देवता चार ॥

देव महाराजादि अन्य हैं, न्याय-शील श्रद्धेय धन्य हैं,
शंकर मिला उक्त चारों को, सर्वोपरि—अधिकार ॥
वै० त्रि० ब० सा० देवता चार ॥१॥

प्रातरुत्थान ११५

(दोहा)

सोते रहैं न जागते, जो जन पिछली रात।
बनते हैं वे आलसी, ऊत न बुध विख्यात ॥१॥

+ब्रह्मचारिणी—बालिका ११६

(गीत)

वह ऊवी रवि की लालिमा,
जगादे इसे मैया ॥ टेक ॥

पीली फटते ही उठ बैठे, सारे वैदिक भैया।
अबलों देख पड़ा सोता है, तेरा लाल कन्हैया ॥
(री) जगादे इसे मैया ॥

ब्रह्म-काल में गुरु से आगे, भागे छोड़ बिछैया।
छुट्टी पाकर शौच क्रिया से, न्हा धो चुके न्हवैया ॥
(री) जगादे इसे मैया ॥

+ एक लड़की छोटे भाई को सोता देखकर माता से कहती है।

बाल ब्रह्मचारी व्रत धारी, बैठे डाल चटैया ।
सन्ध्या ध्यान होम करते हैं, पांचो याग करैया ॥
(री) जगादे इसे मैया ॥
कर व्यायाम चले संथा को, बारे वेद पढ़ैया ।
हे शंकर! आलस्य न डोवे, धर्म, कर्म की नैया ॥
(री) जगादे इसे मैया ॥१॥

विबाह पद्धति ११७

(दोहा)

धार तेज तारुण्य का, एक नारि नर एक ।
दो दो दम्पति प्रेम से, प्रकटें ग्रही अनेक ॥१॥

वैदिक-विवाह ११८

(गीत)

उमगी महिमा उत्कर्ष की,
सुख-मूल-विवाह किया है ॥ टेक ॥
देखो नामी घर का वर है, विज्ञ ब्रह्मचारी सुन्दर है,
आयु पचीसी से ऊपर है, दुलहिन षोडश बर्ष की ।
शुभ-योग मिलाय लिया है ।
सुख-मूल-विवाह किया है ॥
मण्डप के भीतर बैठे हैं, सप्तपदी ये कर बैठे हैं,
चारों भामर भर बैठे हैं, पाय परम-निधि हर्ष की ।
हिलमिल पीयूष पिया है ।
सुख-मूल-विवाह किया है ॥

बैठे सभ्य-सुबोध बराती, पूजें प्रेम पसार घराती,
नारि सीठने एक न गाती, समुचित भारतवर्ष की।
विधि का उपदेश दिया है।
सुख-मूल विवाह किया है ॥
रण्डी, भाँड, कुसंग नहीं है, आमिष, हाला, भंग नहीं है,
गुण्डों का हुरदंग नहीं है, कुमति-अधम-आमर्ष की ॥
तज शंकर कर्म जिया है।
सुख-मूल विवाह किया है ॥ १ ॥

अवनति से उन्नति ११९

(दोहा)

गिरजाता है गर्त में, जड़ जो उन्नत देश।
ऊँचा करते हैं उसे, तब ऊँचे उपदेश ॥१॥

प्रचण्ड-प्रण-पंचदशी १२०

(शुद्धगात्मक-मिलिन्दपाद)

दया का दान देने को, जिन्हों ने जन्म धारे हैं।
न ब्रह्मानन्द से न्यारे, न विद्या ने बिसारे हैं ॥
जिन्हों ने योग से सारे, खरे खोटे निहारे हैं।
प्रतापी देश के प्यारे, विदेशों के दुलारे हैं ॥
हमें अन्धेर-धारा से, भला वे क्यों न तारेंगे।
बिगड़ों को बिगाड़ेंगे, सुधारों को सुधारेंगे ॥१॥

भलाई को न भूलेंगे, सुशिक्षा को न छोड़ेंगे।
हठीले माथा खोदेंगे, प्रतिज्ञा को न तोड़ेंगे ॥

प्रजा के और राजा के, गुणों की गांठ जोड़ेंगे।
भिड़ेंगे भेद का भाँडा, धड़ाका मार फोड़ेंगे ॥
लड़ेंगे लोभ-लीला के, लुटेरों से न हारेंगे।
विगाड़ों को विगाड़ेंगे, सुधारों को सुधारेंगे ॥२॥

जतीले जाति के सारे, प्रबन्धों को टटोलेंगे।
जनों को सत्य-सत्ता की, तुला से ठीक तोलेंगे ॥
बनेंगे न्याय के नेगी, खलों की पोल खोलेंगे।
करेंगे प्रेम की पूजा, रसीले बोल बोलेंगे ॥
गपोड़े पागलों के से, समाजों में न मारेंगे।
बिगाड़ों को बिगाड़ेंगे, सुधारों को सुधारेंगे ॥३॥

बनेंगी सभ्यता-देवी, बड़ाई देव-दूतों की।
हमारे मेल को मस्ती, मिटावेगी न ऊतों की ॥
करेंगे साहसी सेवा, सदाचारी सपूतों की।
घरों में तामसी-पूजा, न होगी प्रेत, भूतों की ॥
मतों के मान मारेंगे, कुपन्थों को बिसारेंगे।
बिगाड़ों को बिगाड़ेंगे, सुधारों को सुधारेंगे ॥४॥

अड़ीले अन्ध-विश्वासी, उलूकों को उड़ादेंगे।
अछूती छूतछैगा की, अछोपाई छुड़ादेंगे ॥
मरों के साथ जीतों के, जुड़े नाते तुड़ादेंगे।
तरेंगे ज्ञान-गंगा में, अविद्या को बुड़ादेंगे ॥
सुधी सद्धर्म धारेंगे, सुकर्मों को उघारेंगे।
बिगाड़ों को बिगाड़ेंगे, सुधारों को सुधारेंगे ॥५॥

धरेंगे ध्यान मेधा का, पढ़ेंगे वेद-चारों को।
प्रमाणों की कसौटीपै, कसेंगे सद्विचारों को ॥

लिखेंगे लोक-लीला के, बड़े छोटे विकारों को।
महा-विज्ञान स्रष्टा का, दिखादेंगे दुलारों को॥
सुखी सर्वज्ञ-सिद्धों पै, सदा सर्वस्व वारेंगे।
बिगाड़ों को बिगाड़ेंगे, सुधारों को सुधारेंगे॥६॥

सुशीला बालिकाओं को, लिखावेंगे पढ़ावेंगे।
न कोरी कर्कशाओं को, वृथा सौना गढ़ावेंगे॥
प्रवीणा को प्रतिष्ठा के, महाचल पै चढ़ावेंगे।
सती के सत्य की शोभा, प्रशंसा से बढ़ावेंगे॥
सुभद्रा-देवियों को यों, दया—दानी दुलारेंगे।
बिगाड़ों को बिगाड़ेंगे, सुधारों को सुधारेंगे॥७॥

बढ़ेगा मान विज्ञानी, सुवक्ता—ग्रन्थकारों का।
घटेगा ढोंग पाखंडी, दुराचारी लबारों का॥
पता दैवज्ञ—देवों में, न पावेगा भरारों का।
अजानों की चिकित्सा से, न होगा नाश प्यारों का॥
सुयोगी योग-विद्या के, विचारों को प्रचारेंगे।
बिगाड़ों को बिगाड़ेंगे, सुधारों को सुधारेंगे॥८॥

कुचाली, चाटुकारों को, न कौड़ी भी ठगावेंगे।
पराई नारियों से जी, न जीतेजी लगावेंगे॥
सहेटों में सुलाने को, न रण्डा को जगावेंगे।
अनाचारी, असभ्यों के, कुभोगों को भगावेंगे॥
पुरानी नायिकाजी को, न ग्रन्थों में निहारेंगे।
बिगाड़ों को बिगाड़ेंगे, सुधारों को सुधारेंगे॥९॥

करेंगे प्यार जीवों पै, न गौओं को कटावेंगे।
बसा कंगाल-दीनों की, न चिन्ता को चटावेंगे॥

महा-मारी-प्रचण्डी की, बढ़ी सीमा घटावेंगे।
कुचाली काल की सारी, कुचालों को हटावेंगे ॥
पड़े दुर्दैव घाती की, न घावों को सहारेंगे।
बिगाड़ों को बिगाड़ेंगे, सुधारों को सुधारेंगे ॥१०॥

फलेगी प्राणदा–खेती, किसानों के कुमारों की।
बढ़ेगी सम्पदा, पूँजी, खरे दूकानदारों की ॥
बढ़ादेगी कलाकारी, कमाई शिल्पकारों की।
बड़ाई लोक में होगी, प्रतापी होनहारों की ॥
करेंगे नाम, कामों की, प्रथा प्यारी पसारेंगे।
बिगाड़ों को बिगाड़ेंगे, सुधारों को सुधारेंगे ॥११॥

अड़ीले मस्त गुंडों के, अखाड़ों को उखाड़ेंगे।
ठगों की पेट–पूजा के, बसे खेड़े उजाड़ेंगे ॥
रहेंगे दूर दुष्टों से, कुशीलों को लताड़ेंगे।
खलों का खोज खोदेंगे, पिशाचों को पछाड़ेंगे ॥
घिनौनी मोह–माया के, प्रपञ्चों को पजारेंगे।
बिगाड़ों को बिगाड़ेंगे, सुधारों को सुधारेंगे ॥ १२ ॥

सुधी श्रद्धा–सुधा सारे, सुकर्मों को पिलावेंगे।
करेंगे नाश मिथ्या का, सचाई को जिलावेंगे ॥
मिलापी मेल–माला में, निरालों को मिलावेंगे ॥
न गन्दी गर्व–गाथा से, पहाड़ों को हिलावेंगे।
"मिलो भाई" सँगाती यों, अछूतों को पुकारेंगे।
बिगाड़ों को बिगाड़ेंगे, सुधारों को सुधारेंगे ॥ १३ ॥

विवेकी ब्रह्म–विद्या की, महत्ता को बखानेंगे।
बड़ा कूटस्थ सत्ता से, किसीको भी न मानेंगे ॥

प्रमादी, राज-विद्रोही, जड़ों को नीच जानेंगे।
ठगी के जाल भोलों के, फँसाने को न तानेंगे॥
कभी पाखण्ड-पापी के, न पैरों को पखारेंगे।
बिगाड़ों को बिगाड़ेंगे, सुधारों को सुधारेंगे॥१४॥

बड़ों के मंत्र मानेंगे, प्रसंगों को न भूलेंगे।
कहो क्या ऊँच ऊँचों की, उँचाई को न छूलेंगे॥
बढ़ेंगे प्रेम के पौधे, दया के फूल फूलेंगे।
भरे आनन्द से चारों, फलों के झाड़ झूलेंगे॥
सभों को "शंकरानन्दी", अनिष्टों से उबारेंगे।
बिगाड़ों को बिगाड़ेंगे, सुधारों को सुधारेंगे॥१५॥

महेन्द्र-महिमा १२१

(प्राचीन-सूक्ति)

बालोपि नाव मन्तव्यो, मनुष्य इति भूमिपः।
महती देवता ह्येषा, नर रूपेण तिष्ठति॥ १॥

महेन्द्र-मङ्गलाष्टक १२२

(रुचिरात्मक-मिलिन्द-पाद)

देख भारती! भारत-प्रभु का, भारत में अभिषेक हुआ।
मंगल से मिल मंगल की मा, मंगल एक अनेक हुआ॥
राज-वेष धर धर्मराज का, श्रीधर धर्म-विवेक हुआ।
मुकुट किरिटी के किरीट की, समता पाकर एक हुआ॥
इन्द्रासन पर बैठ इन्द्र ने, इन्द्रप्रस्थ पर प्यार किया।
प्रभुता पाय जार्ज-पञ्चम ने, सुख-सागर संसार किया॥१॥

सम्वत्सर बसु राग अङ्क भू, बिक्रमीय अनुकूल हुआ।
पौष शुभासित पक्ष सप्तमी, मङ्गल मङ्गल-मूल हुआ ॥
दिव्य-राज धानी दुलहिन का, दूर वियोगज-शूल हुआ।
पतिभाग्य आगतपतिका का, दृश्य कल्प तरु-फूल हुआ ॥
मिलने को बासकसज्जा ने, अति सुन्दर शृङ्गार किया।
प्रभुता पाय जार्ज-पञ्चम ने, सुख-सागर संसार किया ॥२॥

मुक्ता-मणि-मण्डित-मण्डप में, सिद्ध अनुष्ठित काज हुआ।
राजसूय-मख में महेन्द्र का, मान महोत्सव-राज हुआ ॥
देख महामहिमा महत्व की, मुग्ध महीप-समाज हुआ।
उमगा परमानन्द प्रजा का, भव्य-अभ्युदय आज हुआ ॥
सजला, सफला, सस्य-श्यामला, बसुधा पै अधिकार किया।
प्रभुता पाय जार्ज-पञ्चम ने, सुख-सागर संसार किया ॥३॥

अजित, अजातशत्रु, स्वामी के, बल का बृहदुत्कर्ष हुआ।
राज-भक्ति-भाजन बड़भागी, सेवक—भारतवर्ष हुआ ॥
दर्शक, सैनिक, सम्मेलन में, मग्न अलौकिक हर्ष हुआ।
जय जय वादनादि शब्दों का, तुमुलोदधि दुर्धर्ष हुआ ॥
तोपों की घन-घोर गरज ने, शुभ स्वागत-सत्कार किया।
प्रभुता पाय जार्ज-पञ्चम ने, सुख-सागर संसार किया ॥४॥

सुयश-विभूति महारानी का, पूजन पति के साथ हुआ।
बिमला-प्रीति, बिशुद्ध-प्रेम का, गौरब उन्नत-माथ हुआ ॥
रक्षक पाय सशक्ति प्रतापी, द्वीप-समूह सनाथ हुआ।
फूल फूल सब देश फलेंगे, पोषक हित का हाथ हुआ ॥
दान दया से धनकुबेर ने, पुनरुद्धार सुधार किया।
प्रभुता पाय जार्ज—पञ्चम ने, सुख-सागर संसार किया ॥५॥

दान-विधान विलोक कर्ण के, यश का दूर घमण्ड हुआ ।
उपजा दैशिक-मेल मही पै, खण्डित-बङ्ग अखण्ड हुआ ॥
पदवी, पदक, पुरस्कारों से, शासन-शिशु पौगण्ड हुआ ।
छूट गये अपराधी सब से, भिन्न भयानक-दण्ड हुआ ॥
धन्य धनद! धन से विद्या का, अधिकाधिक बिस्तार किया ।
प्रभुता पाय जार्ज-पञ्चम ने, सुख-सागर संसार किया ॥६॥

पुण्य-प्रकाश प्रजेश-भानु का, भूतल पै भरपूर हुआ ।
रही न रात अराजकता की, अशुभ-अंधेरा दूर हुआ ॥
विद्रोही-छल-बल-बादल के, दल का चकनाचूर हुआ ।
प्रतियोगी पौरुष-कलेश का, कुटिल-योग अक्रूर हुआ ॥
मण्डलीक-नृप तारा-गण को, तैजस तेज प्रसार किया ।
प्रभुता पाय जार्ज-पञ्चम ने, सुख-सागर संसार किया ॥७॥

नीच-विचार निशाचर भागे, भ्रम-तुषार का नाश हुआ ।
कुल अन्धेर-उलूक-अन्ध का, उद्यम हीन हताश हुआ ॥
सामाजिक-सद्गुण कमलों का, श्रीसौरभित विकाश हुआ ।
नीति, न्याय, चकई, चक नाचे, निर्मल-यश-आकाश हुआ ॥
शङ्कर के अनुराग-रत्न का, भद्रक भाव प्रचार किया ।
प्रभुता पाय जार्ज-पञ्चम ने, सुख-सागर संसार किया ॥८॥

विमुक्तात्मा-महारानी-विक्टोरिया १२३

(दोहा)

धन्य राज राजेश्वरी, सुयश-जीवनाधार ।
मुक्ति-मंगला से मिली, बन्ध-विभूति बिसार ॥१॥

स्वर्गीय-सम्राट-सप्तम-ऐडवर्ड १२४

(दोहा)

सौंप प्रतापी-पुत्र को, प्रभुता, प्रजा, समाज ।
नायक देवों के बने, ऐडवर्ड—महा राज ॥१॥

वर्त्तमान राजराजेश्वर ५ जार्ज १२५

(दोहा)

मा के अनुगामी बने, एडवर्ड—अमरेश ।
पालें भारतवर्ष को, जय श्री जार्ज-प्रजेश ॥१॥

भगवान भारतेश्वर १२६

(गीत)

भारत-जननी के भरतार,
रक्षा हम सब की करते हैं ॥ टेक ॥
श्री, बल, बोध, अखण्ड-प्रताप, साहस, धर्म, सुकर्म-कलाप,
सधे, शुभ-गुण-सागर-आप, मन में भूल नहीं भरते है ।
भा० ज० भ० र० ह० स० करते हैं ॥
नैतिक नियमों के अनुसार, मंगल-मूल-प्रबन्ध पसार,
किस के सिर पै परमोदार, हित का हाथ नहीं धरते हैं ॥
भा० ज० भ० र० ह० स० करते हैं ॥
भिक्षुक, भीरु, सुभट, भूपाल, पण्डित, अबुध, धनी, कंगाल,
हिल मिल काटें सुख से काल, मायिक मार खाय मरते हैं ।
भा० ज० भ० र० ह० स० करते हैं ॥
शासन-पद्धति के दृढ़-अङ्ग, उमगे अटल-न्याय के सङ्ग,
शंकर-प्रभुता के सब ढङ्ग, दुर्जन देख देख डरते हैं ॥
भा० ज० भ० र० ह० स० करते हैं ॥ १ ॥

भद्र भावार्थ १२७

(दोहा)

गुरुदेवों का दास है, असुरों का उपहास ।
उपदेशों का बास है, भणित भद्र उद्भास ॥ १ ॥

—०* इति *०—

ओ३म्

अनुराग-रत

* मन्दोद्गास *

(विनय-बन्दना)

पाहि नो अग्ने रक्षसः पाहि धूर्तेरराव्णः ।
पाहि रीषत उत वा जिघांसतो बृहद्भानो यविष्ठय ।

ऋ० १-३-१०-१५-

(श्रद्धा-सूक्ति)

मुक्तिप्रदं सुदृढ़-बन्धनतो श्रमाणां,
साक्षाभिजात्म सुखदञ्च गुरुं कृपालुं ।
श्रद्धायुतस्य जनि--मृत्युहरं सु वाक्यै,
बन्दे मुदा परमया करुणा स्पदम्वै ॥ १ ॥

भारत की मन्द-दशा १

(दोहा)

भूल रहे जो जालिया, शङ्कर का उपदेश ।
क्या उन के अन्धेर से, सुधर सकेगा देश ॥ १ ॥

भूत काल की कथा २

(मन्दाक्रान्ता-वृत्त)

स्वामीजी की, जब न सुखदा, घोषणा होरहीथी ।
मिथ्या-माया, कपट छल की, बेदना बोरहीथी ॥